[2020] 1 उम. नि. प. 250

एस. पी. मिश्रा और अन्य

बनाम

मो. लियाकुद्दीन खान और एक अन्य

[2015 की सिविल अपील सं. 3311]

18 अक्तूबर, 2019

न्यायमूर्ति (सुश्री) इंदु मल्होत्रा और न्यायमूर्ति आर. सुभाष रेड्डी

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 133 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 47, 151 एवं आदेश 41 का नियम 32 और 34, भागीदारी अधिनियम, 1932 की धारा 42(ग) और नगर भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 का खंड 20(1)(ख)] – अपील – भागीदारी फर्म का गठन – भागीदारी करार के निबंधनों के अनुसार यदि भागीदारी फर्म के दोनों पक्षकारों में से किसी एक पक्षकार की मृत्यु हो जाती है तो भागीदारी प्रयोजन पूर्ण होने तक मृत भागीदार का विधिक उत्तराधिकारी उसका स्थान ले लेगा और उसके वही अधिकार और कर्तव्य होंगे जो पूर्ववर्ती भागीदार के थे – भागीदारी फर्म के एक पक्षकार की मृत्यु – मृत भागीदार के विधिक उत्तराधिकारियों के विरुद्ध निष्पादन कार्यवाहियां करना – कार्यवाहियां रद्द होना – यदि कोई विधिमान्य भागीदारी गठित की जाती है तो वह तत्समय प्रवृत्त भागीदारी विधि के अनुसार ही शासित होगी यदि प्रवृत्त भागीदारी विधि के उपबंधों के विरुद्ध भागीदारी करार में कोई उपबंध किया जाता है तो वह शून्य और अविधिमान्य होगा । भागीदारी विधि में यह उपबंधित है कि यदि किसी विधिमान्य भागीदारी के दो ही पक्षकार हैं तो यदि उनमें से किसी एक पक्षकार की मृत्यु हो जाती है तो उस दशा में ऐसी भागीदारी समाप्त हो जाती है । यदि मृत भागीदार के विधिक उत्तराधिकारियों ने न तो भागीदारी फर्म में कोई हिस्सा प्राप्त किया है न ही किसी हक या अधिकार का दावा किया है तो ऐसी दशा में मृत भागीदार के विरुद्ध प्राप्त डिक्री का निष्पादन उसके विधिक उत्तराधिकारियों के विरुद्ध नहीं कराया जा सकता है ।

वर्तमान मामले में, इसमें के सभी अपीलार्थी, स्व. श्री जय नारायण मिश्रा के विधिक उत्तराधिकारी हैं और इसमें के सभी प्रत्यर्थी स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विधिक उत्तराधिकारी हैं । स्व. श्री जय नारायण मिश्रा और स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम ने अपने जीवन काल के दौरान तारीख 14 अप्रैल, 1982 को एक भागीदारी समझौता किया । जैसा कि भागीदारी विलेख में कथित है, स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम पायगह कम्पाउंड में स्थित सं. 156-159 माप लगभग 22, 253 वर्ग मीटर अवसंरचना के साथ खुले भूमि की स्वामी है । नगर भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम 1976 के खंड 20(1)(ख) के अधीन भारत सरकार, रक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली से छूट प्राप्त करने के पश्चात्, दोनों भागीदारों ने पायगह कम्पाउंड के भागरूप की भूमि को विकसित करते हुए रियल इस्टेट का कारबार करने के लिए भागीदारी विलेख का निष्पादन किया था । यह प्रतीत होता है कि भूमि का एक बड़ा भाग पहले से ही विकसित था, किंतु विवाद 3381 वर्ग मीटर की सीमा तक की भूमि के बारे में था, जिसका दावा मूल वादी ने पायगह कम्पाउंड के संपत्ति सं. 156-159 के भागरूप में किया था । भागीदारी विलेख के अनुसार, दो भागीदार ही थे । स्व. श्री जय नारायण मिश्रा द्वारा फाइल 1988 की मूल वाद सं. 580 में वादी की मृत्यु तारीख 4 जनवरी, 2001 को हो गई थी, जबकि प्रत्यर्थियों के पूर्वाधिकारी स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम की मृत्यु तारीख 17 मई, 1996 को हो गई थी । अपीलार्थियों के पूर्वाधिकारी स्व. श्री जय नारायण मिश्रा ने अपने जीवन काल के दौरान द्वितीय अपर न्यायाधीश, सिटी सिविल न्यायालय हैदराबाद के समक्ष 1988 की मूल वाद सं. 580 फाइल की । विचारण न्यायालय द्वारा अनुतोषों को मंजूर करते हुए, उक्त वाद की डिक्री तारीख 14 जुलाई, 1993 को पारित कर दी गई थी । मूल वादी की मृत्यु के पश्चात्, वादी के विधिक उत्तराधिकारियों ने अनुतोषों का दावा करते हुए, विचारण न्यायालय के समक्ष निष्पादन याचिका फाइल की है । प्रत्यर्थियों द्वारा निम्नलिखित निष्पादन याचिका में, अनुतोषों का दावा करते हुए, II ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, सिटी सिविल न्यायालय, हैदराबाद के समक्ष फाइल 2005 की निष्पादन

आवेदन (ई.ए.) सं. 6 में, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 47 के अधीन फाइल आवेदन को खारिज कर दिया गया था क्योंकि डिक्री शून्य और अनिष्पादनीय थी । II ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, सिटी सिविल न्यायालय, हैदराबाद द्वारा पारित तारीख 1 फरवरी, 2006 के सकारण आदेश द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 47 के अधीन फाइल आवेदन को मंजूर कर लिया गया था । प्रत्यर्थियों द्वारा उक्त आदेश को आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय, हैदराबाद के समक्ष 2006 की सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 4894 के माध्यम से चुनौती दी गई । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश की पुष्टि कर दी, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि प्रत्यर्थियों के पूर्वाधिकारियों अर्थात् स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विरुद्ध प्राप्त डिक्री विधिक प्रतिनिधियों के विरुद्ध निष्पादन योग्य नहीं है । इससे व्यथित होकर माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई । माननीय न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस मामले में, यह विवादित नहीं है कि मूल भागीदारी विलेख के अनुसार मात्र दो ही भागीदार थे, अर्थात् स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम जो भूमि की स्वामी/प्रत्यर्थियों की पूर्वाधिकारी है और दूसरा स्व. श्री जय नारायण मिश्रा जो इसमें के अपीलार्थियों के पूर्वाधिकारी है । मूल वादी ने 1988 की मूल वाद सं. 580 में विचारण न्यायालय से तारीख 14 जुलाई, 1993 को डिक्री प्राप्त की है । मूल वादी के विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा निष्पादन याचिका में ईप्सित अनुतोषों का परिशीलन करने से, स्वयंमेव ही यह स्पष्ट होता है कि निष्पादन याचिका में ईप्सित अनुतोष, डिक्री की परिधि के परे है । यह ऋजुतः सुस्थिर है कि निष्पादक न्यायालय, डिक्री के परे नहीं जा सकते हैं । मात्र यह प्रश्न जो विचारण न्यायालय के समक्ष 2005 की निष्पादन आवेदन सं. 6 में विचार के लिए था, कि क्या अपीलार्थियों के पूर्वाधिकारी द्वारा प्राप्त डिक्री का अपीलार्थियों के विरुद्ध निष्पादन किया जा सकता है या नहीं । भागीदारी अधिनियम, 1932 की धारा 42 कतिपय आकस्मिक परिस्थितियों में भागीदारी के विघटन के बारे में वर्णन करता है । वर्तमान मामले में, चूंकि मात्र दो भागीदार थे, इसलिए,

एक भागीदार की मृत्यु होने की दशा में, भागीदारी स्वयं ही विघटित हो गई । यह सत्य है कि भागीदारी विलेख के अनुसार, भागीदार इस बात के लिए सहमत थे कि पक्षकारों में से किसी पक्षकार की मृत्यु की दशा में उनके क्रमश: विधिक प्रतिनिधिगण स्वत: ही भागीदारी फर्म में भागीदार हो जाएंगे और वे उक्त भागीदारी के अधीन परिकल्पित अवधि के पूरा हो जाने तक फर्म के भागीदार के रूप में निरंतर कार्य करते रहेंगे और ऐसे विधिक प्रतिनिधिगण जो भागीदार हो गए हैं, उन्हें वही अधिकार होंगे और वे दायित्वों और उत्तरदायित्वों के अधीन होंगे जैसा कि मृतक भागीदार के थे । इस प्रक्रम पर, यह उल्लिखित किया जाता है कि भागीदारों में से किसी एक की मृत्यु होने पर जब एक बार भागीदारी समाप्त हो गई तो ऐसी कोई भागीदारी अस्तित्व में नहीं रही जिसमें स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विधिक प्रतिनिधिगण भागीदार बन सकते थे । स्व. श्री जय नारायण मिश्रा द्वारा स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विरुद्ध तारीख 14 अप्रैल, 1982 के भागीदारी विलेख के अनुसरण में प्राप्त निर्णय और डिक्री, स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विधिक प्रतिनिधिगणों पर आबद्धकर नहीं हो सकती है क्योंकि ऐसी डिक्री उनके विरुद्ध निष्पादन योग्य नहीं है । स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विधिक प्रतिनिधिगण, तारीख 14 अप्रैल, 1982 के मूल भागीदारी विलेख में भागीदार नहीं थे । जब ऐसे विधिक प्रतिनिधिगण संविदा के पक्षकार नहीं है तो ऐसी संविदा से इसे पक्षकारों के सिवाय किसी तृतीय पक्षकार पर इसके अधीन कोई अधिकार प्रदत्त नहीं हो सकते हैं अथवा न ही कोई बाध्यता उद्भूत हो सकती है । कोई अन्य नहीं अपितु, संविदा के पक्षकार ही इसके अधीन हकदार हो सकते हैं अथवा इसके द्वारा उद्भूत हो सकते हैं । ऐसा सिद्धांत को 'संविदा की गोपनीयता' के रूप में जाना जाता है । जब भागीदारी, भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 की धारा 42(ग) के अधीन विधि के प्रवर्तन द्वारा विघटित हो जाती है, तो डिक्री के अनुसरण में निष्पादन का प्रश्न ही नहीं उठता है । मृतक भागीदार के विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा स्वीकृति और करार के बिना एकाकी रूप से कोई संविदा नहीं हो सकती है । यदि मूल भागीदारों के बीच किसी करार में, तृतीय पक्षकार के विरुद्ध कोई खंड है तो ऐसा खंड उन पर

आबद्धकर नहीं होगा और भागीदारी विलेख में ऐसा खंड जो भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 के उपबंधों के प्रतिकूल होता है वह शून्य और प्रवर्तनीय नहीं होता है । ऐसा खंड लोक नीति के विपरीत भी होता है । वर्तमान मामले में, मूल डिक्री, प्रत्यर्थियों जो भागीदारी विलेख के पक्षकार थे, के पूर्वाधिकारी के विरुद्ध प्राप्त की गई थी । भागीदारों में से एक की मृत्यु होने की दशा में, भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 की धारा 42(ग) के अधीन उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, विधि के प्रवर्तन द्वारा कानूनी तौर पर भागीदारी स्वयं ही विघटित हो गई । जब प्रत्यर्थी, भागीदारी फर्म के पक्षकार नहीं हैं तो वे अपीलार्थी के पूर्वाधिकारी द्वारा प्राप्त डिक्री से आबद्ध नहीं हैं । इसके अतिरिक्त, जब प्रत्यर्थियों का यह पक्षकथन है कि उन्हें भागीदारी फर्म से उद्भूत होने वाले कोई आस्तियां या दायित्व प्राप्त नहीं हुए हैं तो मूल वादी द्वारा प्राप्त डिक्री प्रत्यर्थियों के विरुद्ध निष्पादन योग्य नहीं है । यह भी उल्लिखित किया जाता है कि स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम ने अपने जीवन काल के दौरान ही तारीख 26 जून, 1977 के भागीदारी विलेख के अधीन गठित भागीदारी फर्म के विघटन और उसके लेखे के लिए VII ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, सिटी सिविल न्यायालय, हैदराबाद के समक्ष 1990 की मूल वाद सं. 1061 फाइल की थी । यह सत्य है कि वह विभिन्न भागीदारी थी किन्तु, पक्षकार वही थे । स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम द्वारा फाइल ऐसे वाद में, उक्त वाद को खारिज करने के लिए अपीलार्थियों स्व. श्री जय नारायण मिश्रा के पूर्वाधिकारी ने 1997 की आई. सं. 1649 फाइल की थी, यह दावा करते हुए कि भागीदारों में से एक की मृत्यु होने की दशा में, वाद लंबित रहने के दौरान तृतीय पक्षकार को प्रस्तुत करने की कोई जगह नहीं थी । स्व. श्री जय नारायण मिश्रा का पक्षकथन यह था कि भागीदारी विघटित हो गई थी । तथापि, तारीख 14 अप्रैल, 1982 के भागीदारी विलेख से उद्भूत होने वाली किसी प्रकार की परिस्थिति में, अपीलार्थियों ने यह दावा किया था कि डिक्री उन प्रत्यर्थियों के विरुद्ध निष्पादन योग्य है जो निर्णीत-ऋणी के विधिक उत्तराधिकारी हैं । इस प्रकार, न्यायालय का यह मत है कि प्रत्यर्थी भागीदारी विलेख के पक्षकार नहीं था और यह कि भागीदारी, भागीदारों में से एक की मृत्यु होने की

दशा में विघटित हो गई थी, प्रत्यर्थियों ने भागीदारी फर्म की आस्तियों से कोई फायदा प्राप्त नहीं किया था, इसलिए, अपीलार्थियों के पूर्वाधिकारियों द्वारा प्राप्त डिक्री, इसमें के प्रत्यर्थियों के विरुद्ध निष्पादन योग्य नहीं है । (पैरा 13, 14, 15, 16, 17, 18, 21 और 22)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2017] (2017) 4 एस. सी. सी. 97 :
प्रभाकर अडिगा बनाम **गौरी और अन्य** । 11, 19

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2015 की सिविल अपील सं 3311.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 133 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री ए. सुब्बाराव, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री बी. आदि नारायण राव, ज्येष्ठ अधिवक्ता, वेंकटेश्वर राव, अनुमोलू, चंद्र मोहन एनीसेट्टी, अधिवक्तागण

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति आर. सुभाष रेड्डी ने दिया ।

न्या. रेड्डी – अपीलार्थियों ने यह सिविल अपील, आंध्र प्रदेश, उच्च न्यायालय, हैदराबाद द्वारा 2006 की सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 4894 में पारित तारीख 9 अप्रैल, 2009 के विरुद्ध फाइल की है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने द्वितीय ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, सिटी सिविल न्यायालय, हैदराबाद द्वारा 1980 की मूल वाद सं. 580 में 2003 की निष्पादन आवेदन सं. 122 में 2005 की निष्पादन आवेदन सं. 6 में पारित तारीख 1 फरवरी, 2006 के आदेश की पुष्टि कर दी थी ।

2. विद्वान् द्वितीय ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, सिटी सिविल न्यायालय, हैदराबाद ने पूर्वोक्त आदेश द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 जिसे इसमें इसके पश्चात् सी. पी. सी. कहा गया है की धारा 47 के अधीन प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल आवेदन को मंजूर कर लिया था ।

3. इसमें के सभी अपीलार्थी, स्व. श्री जय नारायण मिश्रा के

विधिक उत्तराधिकारी हैं और इसमें के सभी प्रत्यर्थी स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विधिक उत्तराधिकारी हैं । स्व. श्री जय नारायण मिश्रा और स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम ने अपने जीवन काल के दौरान तारीख 14 अप्रैल, 1982 को एक भागीदारी समझौता किया । जैसा कि भागीदारी विलेख में कथित है, स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम पायगह कम्पाउंड में स्थित सं. 156-159 माप लगभग 22, 253 वर्ग मीटर अवसंरचना के साथ खुले भूमि की स्वामी है । नगर भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम 1976 के खंड 20(1)(ख) के अधीन भारत सरकार, रक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली से छूट प्राप्त करने के पश्चात्, दोनों भागीदारों ने पायगह कम्पाउंड के भागरूप की भूमि को विकसित करते हुए रियल इस्टेट का कारबार करने के लिए भागीदारी विलेख का निष्पादन किया था । यह प्रतीत होता है कि भूमि का एक बड़ा भाग पहले से ही विकसित था, किंतु विवाद 3381 वर्ग मीटर की सीमा तक की भूमि के बारे में था, जिसका दावा मूल वादी ने पायगह कम्पाउंड के संपत्ति सं. 156-159 के भागरूप में किया था। भागीदारी विलेख के अनुसार, दो भागीदार ही थे ।

4. स्व. श्री जय नारायण मिश्रा द्वारा फाइल 1988 की मूल वाद सं. 580 में वादी की मृत्यु तारीख 4 जनवरी, 2001 को हो गई थी, जबकि प्रत्यर्थियों के पूर्वाधिकारी स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम की मृत्यु तारीख 17 मई, 1996 को हो गई थी । अपीलार्थियों के पूर्वाधिकारी स्व. श्री जय नारायण मिश्रा ने अपने जीवन काल के दौरान द्वितीय अपर न्यायाधीश, सिटी सिविल न्यायालय हैदराबाद के समक्ष 1988 की मूल वाद सं. 580 फाइल की, जिसमें निम्नलिखित अनुतोष का दावा किया था :-

> 1. कि 3381 वर्ग मीटर की सीमा तक की संपत्ति का अभिन्यास योजना तैयार करने, विकसित करने और उसका विक्रय करने के कार्य करने से वादी को रोकने से, प्रतिवादी और उसकी ओर से दावा करने वाले सभी व्यक्तियों को अवरुद्ध करते हुए प्रतिवादी के विरुद्ध स्थायी व्यादेश जारी किया जाए ।

2. एस. पी. रोड, सिकंदराबाद पर स्थित पायगह कालोनी के भागरूप माप 3381 वर्ग मीटर भूमि के संबंध में मंजूरी के लिए और उसके खर्चों के लिए छावनी बोर्ड के समक्ष प्रस्तुत अभिन्यास योजना और अन्य दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने के लिए प्रतिवादियों को निर्देश देते हुए, आज्ञापक व्यादेश जारी किया जाए ।

5. विचारण न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अनुतोषों को मंजूर करते हुए, उक्त वाद की डिक्री तारीख 14 जुलाई, 1993 को पारित कर दी गई थी :-

1. एतद्द्वारा, प्रतिवादी और प्रतिवादी की ओर से दावा करने वाले सभी व्यक्तियों को वाद अनुसूचित संपत्ति के संबंध में विकास कार्य करने और उसका विक्रय करने से स्थायी रूप से अवरुद्ध किया जाता है,

2. एतद्द्वारा, वाद अनुसूचित संपत्ति के संबंध में मंजूरी के लिए छावनी बोर्ड, सिकंदराबाद के समक्ष प्रस्तुत अभिन्यास योजना और अन्य दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने के लिए प्रत्यर्थी को निर्देश दिया जाता है ।

3. प्रत्येक पक्षकार अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे ।

6. मूल वादी की मृत्यु के पश्चात्, वादी के विधिक उत्तराधिकारियों ने निम्नलिखित अनुतोषों का दावा करते हुए, विचारण न्यायालय के समक्ष निष्पादन याचिका फाइल की है :-

"1. वाद अनुसूचित संपत्ति के संबंध मे मंजूरी के लिए छावनी बोर्ड, सिकन्दराबाद, के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए अभिन्यास योजना पर हस्ताक्षर करने के लिए जेडीआर सं. 2 से 4 को निर्देशित किया जाए,

2. विकास के लिए अतिरिक्त भूमि निश्चित करते हुए नए/पुनरीक्षित अभिन्यास नक्शे पर हस्ताक्षर करने का निर्देश दिया जाए,

3. अतिरिक्त भूमि, जिसके लिए अभिन्यास योजना प्रस्तुत किया जाना में प्रवेश करने के लिए समर्थ बनाने हेतु मौजूद समुचित सीमा दीवार को तोड़ने का निर्देश दिया जाए,

4. अगले 10 वर्षों के लिए किसी जल कनेक्शन का दावा नहीं करने का वचन लेते हुए, छावनी बोर्ड को पत्र पर हस्ताक्षर करने का निर्देश दिया जाए,

5. उन सभी अन्य दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने का निर्देश दिया जाए जिनकी अतिरिक्त भूमि के विकास के संबंध में अपेक्षित अब या भविष्य में अपेक्षा हो ।

6. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 41 के नियम 32 और 34 तथा धारा 151 के अधीन वाद भूमि के क्रेताओं के पक्ष में रजिस्ट्रीकरण के लिए विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए ज्ञापन दिया जाए ।"

7. प्रत्यर्थियों द्वारा निम्नलिखित निष्पादन याचिका में, अनुतोषों का दावा करते हुए, II ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, सिटी सिविल न्यायालय, हैदराबाद के समक्ष फाइल 2005 की निष्पादन आवेदन (ई.ए.) सं. 6 में, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 47 के अधीन फाइल आवेदन को खारिज कर दिया गया था क्योंकि डिक्री शून्य और अनिष्पादनीय थी । II ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, सिटी सिविल न्यायालय, हैदराबाद द्वारा पारित तारीख 1 फरवरी, 2006 के सकारण आदेश द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 47 के अधीन फाइल आवेदन को मंजूर कर लिया गया था । प्रत्यर्थियों द्वारा उक्त आदेश को आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय, हैदराबाद के समक्ष 2006 की सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 4894 के माध्यम से चुनौती दी गई । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश की पुष्टि कर दी, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि प्रत्यर्थियों के पूर्वाधिकारियों अर्थात् स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विरुद्ध प्राप्त डिक्री विधिक प्रतिनिधियों के विरुद्ध निष्पादन योग्य नहीं है ।

8. हमने, अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री ए. सुब्बा राव और प्रत्यर्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री बी. आदि नारायण राव जिनकी सहायता एडवोकेट-ऑन-रिकार्ड श्री वेकैंटश्वर राव अनुमोलू ने किया, को सुना ।

9. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री ए. सुब्बा राव ने यह दलील दी है कि भागीदारी विलेख के निबंधनों के अनुसार, पक्षकारों में से किसी पक्षकार की मृत्यु की दशा में, उनके विधिक उत्तराधिकारी स्वत: ही भागीदारी फर्म में भागीदार हो जाएंगे और वे भागीदारी के अधीन परिकल्पित कार्य पूर्ण होने तक भागीदारों के रूप में कार्य करते रहेंगे और ऐसे विधिक प्रतिनिधिगण जो भागीदार हो गए हैं, उन्हें वही अधिकार होंगे और वे उन्हीं दायित्वों और उत्तरदायित्वों के अधीन होंगे जैसा कि मृतक भागीदार के थे । तारीख 14 अप्रैल, 1982 के भागीदारी विलेख के सुसंगत खंड, निम्नलिखित हैं :-

> "यह भागीदारी, लिखित में लेखबद्ध आपसी करार के सिवाय कार्य समाप्ति होने तक विघटित नहीं होगी ।
>
> तद्द्वारा, पक्षकार, अभिव्यक्तत: और विनिर्दिष्टत: इस बात के लिए सहमत हैं कि पक्षकारों में से किसी पक्षकार की मृत्यु की दशा में, उनके विधिक उत्तराधिकारी स्वत: ही भागीदारी फर्म में भागीदार हो जाएंगे और वे भागीदारी के अधीन परिकल्पित कार्य पूर्ण होने तक भागीदारों के रूप में कार्य करते रहेंगे और ऐसे विधिक प्रतिनिधिगण जो भागीदार हो गए हैं, उन्हें वही अधिकार होंगे और वे उन्हीं दायित्वों और उत्तरदायित्वों के अधीन होंगे जैसा कि मृतक भागीदार के थे ।"

10. भागीदारी विलेख के अंतर्वस्तुओं को निर्दिष्ट करते हुए, अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री ए. सुब्बा राव ने यह दलील दी है कि अपीलार्थियों के पूर्वाधिकारी द्वारा प्राप्त डिक्री निष्पादित योग्य है और प्रत्यर्थियों जो मूल भागीदार के विधिक प्रतिनिधिगण हैं, के विरुद्ध है । विचारण न्यायालय के साथ ही उच्च न्यायालय ने यह त्रुटिपूर्ण रूप से अभिनिर्धारित किया है कि डिक्री, जो अंतिम हो गई है, प्रत्यर्थियों के विरुद्ध निष्पादन योग्य नहीं है ।

11. विद्वान् काउंसेल ने **प्रभाकर अडिगा** बनाम **गौरी और अन्य**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का जोरदार अवलंब लिया है ।

12. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल बी. आदि नारायण राव ने यह दलील दी है कि क्योंकि मात्र दो भागीदार थे और भागीदारों में से एक भागीदार की मृत्यु होने पर, भागीदारी अधिनियम, 1932 की धारा 42(ग) के अधीन उपबंध को ध्यान में रखते हुए, भागीदारी विघटित हो गई थी । यह निवेदन किया है कि जब मुकदमा करने वाले के अधिकार अस्तित्व में रहते हैं, तब ही ऐसी दशा में, डिक्री निष्पादित हो सकती है । यह निवेदन किया है कि प्रत्यर्थी, भागीदारी विलेख में भागीदार नहीं थे और यदि भागीदारी विलेख में कोई खंड जो कानूनी उपबंधों के प्रतिकूल है तो शून्य होता है क्योंकि ऐसे खंड लोक नीति के विरुद्ध होते हैं । यह निवेदन किया है कि जब भागीदारी स्वयं ही भागीदारों में से एक भागीदार की मृत्यु होने पर विघटित हो गई तो ऐसी दशा में मूल भागीदार द्वारा प्राप्त डिक्री के अधीन अधिकार का दावा करने वाले अपीलार्थियों की डिक्री को प्रत्यर्थियों के विरुद्ध निष्पादित नहीं किया जा सकता है ।

13. इस मामले में, यह विवादित नहीं है कि मूल भागीदारी विलेख के अनुसार मात्र दो ही भागीदार थे, अर्थात् स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम जो भूमि की स्वामी/प्रत्यर्थियों की पूर्वाधिकारी है और दूसरा स्व. श्री जय नारायण मिश्रा जो इसमें के अपीलार्थियों के पूर्वाधिकारी है ।

14. मूल वादी ने 1988 की मूल वाद सं. 580 में विचारण न्यायालय से तारीख 14 जुलाई, 1993 को डिक्री प्राप्त की है, जिसने निम्नलिखित अनुतोषों को मंजूर किया था :-

> "1. तद्द्वारा, प्रतिवादी और प्रतिवादी के माध्यम से दावा करने वाले सभी व्यक्तियों को वाद अनुसूचित संपत्तियों के संबंध में, संपत्ति के विकास कार्य करने से और उसके विक्रय करने से स्थायी तौर पर अवरुद्ध किया जाता है ।

---

[1] (2017) 4 एस. सी. सी. 97.

2. तद्द्वारा, प्रतिवादी को वाद अनुसूचित संपत्ति के संबंध में मंजूरी के लिए छावनी बोर्ड, सिकन्दराबाद के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए अभिन्यास नक्शा और अन्य दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने का निर्देश दिया जाता है ।

3. प्रत्येक पक्षकार अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे ।"

15. मूल वादी के विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा निष्पादन याचिका में ईप्सित अनुतोषों का परिशीलन करने से, स्वयंमेव ही यह स्पष्ट होता है कि निष्पादन याचिका में ईप्सित अनुतोष, डिक्री की परिधि के परे है । यह ऋजुत: सुस्थिर है कि निष्पादक न्यायालय, डिक्री के परे नहीं जा सकते हैं । मात्र यह प्रश्न जो विचारण न्यायालय के समक्ष 2005 की निष्पादन आवेदन सं. 6 में विचार के लिए था, की क्या अपीलार्थियों के पूर्वाधिकारी द्वारा प्राप्त डिक्री का अपीलार्थियों के विरुद्ध निष्पादन किया जा सकता है या नहीं । भागीदारी अधिनियम, 1932 की धारा 42 कतिपय आकस्मिक परिस्थितियों में भागीदारी के विघटन के बारे में वर्णन करता है । उक्त उपबंध के अनुसार, भागीदारों के बीच संविदा के अध्यधीन एक फर्म का विघटन तब होता है जब :-

(क) जब यदि वह किसी नियत अवधि के लिए गठित की गई हो, तो उस अवधि के अवसान से,

(ख) यदि वह एक या अधिक प्रोद्यमों या उपक्रमों को चलाने के लिए गठित की गई हो, तो उसके या उनके पूर्ण हो जाने से,

(ग) किसी भागीदार की मृत्यु हो जाने से, और

(घ) किसी भागीदार के दिवालिया न्यायनिर्णीत किए जाने से ।

16. वर्तमान मामले में, चूंकि मात्र दो भागीदार थे, इसलिए, एक भागीदार की मृत्यु होने की दशा में, भागीदारी स्वयं ही विघटित हो गई ।

17. यह सत्य है कि भागीदारी विलेख के अनुसार, भागीदार इस बात के लिए सहमत थे कि पक्षकारों में से किसी पक्षकार की मृत्यु की

दशा में उनके क्रमश: विधिक प्रतिनिधिगण स्वत: ही भागीदारी फर्म में भागीदार हो जाएंगे और वे उक्त भागीदारी के अधीन परिकल्पित अवधि के पूरा हो जाने तक फर्म के भागीदार के रूप में निरंतर कार्य करते रहेंगे और ऐसे विधिक प्रतिनिधिगण जो भागीदार हो गए हैं, उन्हें वही अधिकार होंगे और वे दायित्वों और उत्तरदायित्वों के अधीन होंगे जैसा कि मृतक भागीदार के थे ।

18. इस प्रक्रम पर, यह उल्लिखित किया जाता है कि भागीदारों में से किसी एक की मृत्यु होने पर जब एक बार भागीदारी समाप्त हो गई तो ऐसी कोई भागीदारी अस्तित्व में नहीं रही जिसमें स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विधिक प्रतिनिधिगण भागीदार बन सकते थे । स्व. श्री जय नारायण मिश्रा द्वारा स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विरुद्ध तारीख 14 अप्रैल, 1982 के भागीदारी विलेख के अनुसरण में प्राप्त निर्णय और डिक्री, स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विधिक प्रतिनिधिगणों पर आबद्धकर नहीं हो सकती है क्योंकि ऐसी डिक्री उनके विरुद्ध निष्पादन योग्य नहीं है । स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम के विधिक प्रतिनिधिगण, तारीख 14 अप्रैल, 1982 के मूल भागीदारी विलेख में भागीदार नहीं थे । जब ऐसे विधिक प्रतिनिधिगण संविदा के पक्षकार नहीं है तो ऐसी संविदा से इसे पक्षकारों के सिवाय किसी तृतीय पक्षकार पर इसके अधीन कोई अधिकार प्रदत्त नहीं हो सकते हैं अथवा न ही कोई बाध्यता उद्भूत हो सकती है । कोई अन्य नहीं अपितु, संविदा के पक्षकार ही इसके अधीन हकदार हो सकते हैं अथवा इसके द्वारा उद्भूत हो सकते हैं । ऐसा सिद्धांत को 'संविदा की गोपनीयता' के रूप में जाना जाता है । जब भागीदारी, भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 की धारा 42(ग) के अधीन विधि के प्रवर्तन द्वारा विघटित हो जाती है, तो डिक्री के अनुसरण में निष्पादन का प्रश्न ही नहीं उठता है । मृतक भागीदार के विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा स्वीकृति और करार के बिना एकाकी रूप से कोई संविदा नहीं हो सकती है । यदि मूल भागीदारों के बीच किसी करार में, तृतीय पक्षकार के विरुद्ध कोई खंड है तो ऐसा खंड उन पर आबद्धकर नहीं होगा और भागीदारी विलेख में ऐसा खंड जो भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 के उपबंधों के प्रतिकूल होता है वह शून्य

और प्रवर्तनीय नहीं होता है । ऐसा खंड लोक नीति के विपरीत भी होता है ।

19. **प्रभाकर अडिगा** बनाम **गौरी और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले से, जिसका अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री ए. सुब्बा राव द्वारा जोरदार अवलंब लिया गया है, वर्तमान मामले के तथ्यों और II ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, सिटी सिविल न्यायालय, हैदराबाद के समक्ष फाइल 1988 की मूल वाद सं. 580 में मुकदमेबाजों के अधिकारों के बारे में, उनके पक्षकथन के समर्थन में कोई सहायता नहीं मिलती है । **प्रभाकर अडिगा** (उपर्युक्त) वाले मामले में, वादी को एक रजिस्ट्रीकृत भागीदारी विलेख द्वारा वाद अनुसूचित संपत्ति आबंटित हुई थी और उसे उसका कब्जा भी मिल गया था । प्रतिवादी को कुटुम्ब का विभाजन होने पर भूमि के एक भाग का आबंटन हो गया था । जब वाद अनुसूचित संपत्ति के उस हिस्से में हस्तक्षेप हुआ जो रजिस्ट्रीकृत भागीदारी विलेख के अनुसार, वादी के हिस्से में आता था तब स्थायी व्यादेश के लिए वाद फाइल किया गया था ।

20. पूर्वोक्त मामले में, स्थायी व्यादेश की डिक्री पारित होने के पश्चात्, निर्णीत-ऋणी की मृत्यु हो गई थी । जब निर्णीत-ऋणी के उत्तराधिकारियों ने स्थायी व्यादेश की डिक्री का अतिक्रमण होने पर डिक्री-धारक को बलपूर्वक बेकब्जा करने की कोशिश की तो डिक्री-धारक ने निष्पादन याचिका फाइल की । निष्पादन न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि निर्णीत-ऋणी के उत्तराधिकारी डिक्री से आबद्ध नहीं है । जब ऐसे आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष प्रश्नगत किया गया तो उच्च न्यायालय ने रिट याचिका मंजूर कर ली । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि स्थायी व्यादेश की डिक्री को निर्णीत-ऋणी के विधिक उत्तराधिकारियों के विरुद्ध प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता है क्योंकि व्यादेश भूमि के साथ आगे नहीं बढ़ता है । इस न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 50 के साथ पठित आदेश 21 के नियम 32 के अधीन उपबंधों के प्रति निर्देश करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसी डिक्री को विधिक प्रतिनिधियों के विरुद्ध निष्पादित किया जा सकता है । किन्तु, उसी समय निर्णय के पैरा 25

में, जिसका अवलंब प्रत्यर्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री बी. आदि नारायण द्वारा लिया गया है, निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया :-

"25. हमारे सुविचारित राय में, अधिकार जिसे वर्तमान मामले में वाद में न्यायनिर्णीत किया गया था और निष्कर्ष जिसमें विवादित संपत्ति जो दाय योग्य और विभाज्य है, के बारे में व्यादेश मंजूर करने के लिए आधार के रूप में अभिलिखित किए गए हैं, न केवल डिक्री धारकों के विधिक उत्तराधिकारियों के फायदों को ही सुनिश्चित करता है अपितु, निर्णीत-ऋणी के विधिक उत्तराधिकारियों पर भी आबद्धकर होगा । सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 50 से यह प्रकट होता है कि जब निर्णीत-ऋणी की, डिक्री का समाधान होने के पूर्व ही मृत्यु हो जाती है तो यह विधिक प्रतिनिधियों के विरुद्ध निष्पादित की जा सकती है । धारा 50 विशिष्ट प्रकार की डिक्री तक सीमित नहीं करता है । व्यादेश के लिए डिक्री भी मृतक निर्णीत-ऋणी के विधिक प्रतिनिधियों के विरुद्ध निष्पादित की जा सकती है । सूत्रवाक्य "कार्रवाई का व्यक्तिगत अधिकार व्यक्ति की मृत्यु के साथ समाप्त हो जाता है" मामलों में कतिपय श्रेणी तक ही सीमित है जैसा कि इस न्यायालय द्वारा गिरिजननंदनी देवी **बनाम** विजेन्द्र नारायण चौधरी [ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 1124] वाले मामले में उपदर्शित किया गया है और जब मुकदमे वाले अधिकार दाय योग्य होते हैं तो साधारणत: डिक्री का उपशमन नहीं होता है और डिक्री-धारक के विधिक प्रतिनिधियों द्वारा और निर्णीत-ऋणी या उसके विधिक प्रतिनिधियों के विरुद्ध प्रवर्तित कराया जा सकता है । यह लोक नीति के विरुद्ध होगा कि डिक्री धारक से यह कहा जाए कि वह एक बार पुन: निर्णीत-ऋणी के विधिक प्रतिनिधियों के विरुद्ध मुकदमेबाजी करे जबकि वही वाद-हेतुक और व्यादेश अस्तित्व में है । नि:संदेह, यह सत्य है कि साधारणतया व्यादेश के लिए डिक्री भूमि के साथ आगे नहीं बढ़ती है । कानूनी उपबंधों के अभाव में, इसे प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता है । तथापि, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 50 में अंतर्विष्ट विनिर्दिष्ट उपबंधों को ध्यान में रखते हुए ऐसी डिक्री को

विधिक प्रतिनिधियों के विरुद्ध निष्पादित किया जा सकता है ।"

21. पूर्वोक्त निर्णय के परिशीलन से यह स्पष्ट होता है कि निष्पादन योग्य डिक्री पक्षकारों द्वारा मुकदमेबाजी के अधिकारों पर निर्भर करता है । वर्तमान मामले में, मूल डिक्री, प्रत्यर्थियों जो भागीदारी विलेख के पक्षकार थे, के पूर्वाधिकारी के विरुद्ध प्राप्त की गई थी । भागीदारों में से एक की मृत्यु होने की दशा में, भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 की धारा 42(ग) के अधीन उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, विधि के प्रवर्तन द्वारा कानूनी तौर पर भागीदारी स्वयं ही विघटित हो गई । जब प्रत्यर्थी, भागीदारी फर्म के पक्षकार नहीं हैं तो वे अपीलार्थी के पूर्वाधिकारी द्वारा प्राप्त डिक्री से आबद्ध नहीं हैं । इसके अतिरिक्त, जब प्रत्यर्थियों का यह पक्षकथन है कि उन्हें भागीदरी फर्म से उद्भूत होने वाले कोई आस्तियां या दायित्व प्राप्त नहीं हुए हैं तो मूल वादी द्वारा प्राप्त डिक्री प्रत्यर्थियों के विरुद्ध निष्पादन योग्य नहीं है ।

22. यह भी उल्लिखित किया जाता है कि स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम ने अपने जीवन काल के दौरान ही तारीख 26 जून, 1977 के भागीदारी विलेख के अधीन गठित भागीदारी फर्म के विघटन और उसके लेखे (हिसाब-किताब) के लिए VII ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, सिटी सिविल न्यायालय, हैदराबाद के समक्ष 1990 की मूल वाद सं. 1061 फाइल की थी । यह सत्य है कि वह विभिन्न भागीदारी थी किन्तु, पक्षकार वही थे । स्व. श्रीमती हशमतुन्निसा बेगम द्वारा फाइल ऐसे वाद में, उक्त वाद को खारिज करने के लिए अपीलार्थियों स्व. श्री जय नारायण मिश्रा के पूर्वाधिकारी ने 1997 की आई. सं. 1649 फाइल की थी, यह दावा करते हुए कि भागीदारों में से एक की मृत्यु होने की दशा में, वाद लंबित रहने के दौरान तृतीय पक्षकार को प्रस्तुत करने की कोई जगह नहीं थी । स्व. श्री जय नारायण मिश्रा का पक्षकथन यह था कि भागीदारी विघटित हो गई थी । तथापि, तारीख 14 अप्रैल, 1982 के भागीदारी विलेख से उद्भूत होने वाली किसी प्रकार की परिस्थिति में, अपीलार्थियों ने यह दावा किया था कि डिक्री उन प्रत्यर्थियों के विरुद्ध निष्पादन योग्य है जो निर्णीत-ऋणी के विधिक उत्तराधिकारी हैं । इस प्रकार, हमारा यह मत है कि प्रत्यर्थी भागीदारी विलेख के पक्षकार नहीं

थे और यह कि भागीदारी, भागीदारों में से एक की मृत्यु होने की दशा में विघटित हो गई थी, प्रत्यर्थियों ने भागीदारी फर्म की आस्तियों से कोई फायदा प्राप्त नहीं किया था, इसलिए, अपीलार्थियों के पूर्वाधिकारियों द्वारा प्राप्त डिक्री, इसमें के प्रत्यर्थियों के विरुद्ध निष्पादन योग्य नहीं है ।

23. उसी प्रकार के मत को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह मत है कि विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थियों द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 47 के अधीन फाइल आवेदन को सही ही मंजूर किया है और उच्च न्यायालय द्वारा इसमें के अपीलार्थी द्वारा फाइल सिविल पुनरीक्षण आवेदन को खारिज करते हुए, ऐसे आदेश की पुष्टि करने में कोई त्रुटि कारित नहीं की है ।

24. हम, इस अपील में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं जिससे कि आक्षेपित सकारण आदेश में हस्तक्षेप किया जा सके ।

25. तद्नुसार, यह सिविल अपील खारिज की जाती है । खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

क.